

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 2 अध्याय 6: विराट् पुरुष की महिमा

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



सृष्टि का प्रत्येक लोक, प्रत्येक देवता, प्रत्येक तत्त्व विराट् पुरुष के विशाल, देदीप्यमान शरीर के भीतर विश्राम करता हुआ दर्शाया गया है — वहीं जीवन्त स्वरूप जिसमें ब्रह्मा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को पहले से ही संगठित पाते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पूर्व अध्याय ब्रह्मा को उनकी स्वीकारोक्ति के मध्य में छोड़ गया था — उन्होंने अपने पुत्र नारद को बताया था कि वे स्वयं सृष्टि के परम स्रोत नहीं हैं, और यह वर्णन किया था कि ब्रह्माण्ड किस प्रकार भगवान् से गुणों, महत्, तत्त्वों तथा इन्द्रियों के माध्यम से प्रकट होता है, यहाँ तक कि ब्रह्माण्ड-अण्ड के विदीर्ण होने तथा समस्त चौदह लोकों को धारण करने वाले विराट् पुरुष के प्रादुर्भाव तक। ब्रह्मा यहाँ किसी नए प्रश्न के लिए नहीं रुकते; वे बिना किसी विराम के इस षष्ठ अध्याय में आगे बढ़ते जाते हैं। अब वे इस बात से कि विराट् पुरुष के भीतर लोक कहाँ स्थित हैं, इस बात की ओर मुड़ते हैं कि उस विशाल स्वरूप का प्रत्येक अंग, इन्द्रिय तथा शक्ति वास्तव में क्या उत्पन्न करती है — मुख, जिह्वा, नेत्र, कान, त्वचा, भुजाएँ, चरण, और अधिक, प्रत्येक किसी ब्रह्माण्डीय तत्त्व, देवता अथवा प्रकृति के अंश का जन्मस्थान। अध्याय एक भावपूर्ण व्यक्तिगत स्वीकारोक्ति तक पहुँचता है: स्वयं ब्रह्मा, “वेद स्वरूप” तथा प्रजापतियों के अधिपति, यह स्वीकार करते हैं कि समस्त तपस्या तथा समस्त योग-सिद्धि के बावजूद, वे उस भगवान् को पूर्णतः कभी नहीं जान सके जिनके कारण उनका अपना अस्तित्व है। अध्याय ब्रह्मा की इस घोषणा के साथ समाप्त होता है कि आगे क्या आने वाला है — परम पुरुष के लीला-अवतार, जो अगले अध्याय का विषय है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 2 (द्वितीय स्कन्ध)
- अध्याय: 6 (षष्ठ अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: विराट् पुरुष की महिमा
- मुख्य वक्ता: ब्रह्मा, जो पञ्चम अध्याय से बिना किसी विराम के नारद को अपना उत्तर जारी रखते हैं — यह संवाद श्रीशुकदेव गोस्वामी राजा परीक्षित को सुनाते हैं, और सूत गोस्वामी उसे पुनः नैमिषारण्य के ऋषियों को कहते हैं
- मुख्य श्रोता: ऋषि नारद, ब्रह्मा के पुत्र (कथित संवाद के भीतर); राजा परीक्षित (श्रीशुकदेव से सुनते हुए); तथा ऋषि शौनक एवं नैमिषारण्य का ऋषि-समुदाय (सूतजी से सुनते हुए)
- मुख्य स्थान: सृष्टि का आदिम प्रभात, ब्रह्मा के आसन पर; जो श्रीशुकदेव के परीक्षित को दिए गंगा-तटीय उपदेश तथा नैमिषारण्य के वन-आश्रम के भीतर कथित है
- मुख्य विषय-वस्तु: विराट् पुरुष के प्रत्येक अंग तथा शक्ति से किसी देवता, तत्त्व अथवा ब्रह्माण्डीय सिद्धान्त के प्रकट होने का विस्तृत विवरण, तत्पश्चात् ब्रह्मा की यह स्वीकारोक्ति कि वे भी भगवान् के यथार्थ स्वरूप को नहीं जान सकते
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 1–45
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

वह शरीर जो सम्पूर्ण सृष्टि बन जाता है

ब्रह्मा वहीं से पुनः आरम्भ करते हैं जहाँ उन्होंने छोड़ा था, विराट् पुरुष का अंग-प्रत्यंग वर्णन करते हुए, मानो वे ब्रह्माण्ड के साक्षात् स्रोत हों। मुख वाणी तथा अग्नि-देव का जन्मस्थान है; शरीर के सात आवश्यक अवयव सात वैदिक छन्दों के स्रोत बनते हैं; जिह्वा प्रत्येक प्रकार के भोजन तथा रस के अधिष्ठाता देवता वरुण का स्रोत है। नासिकाओं से पाँच प्राण-वायु तथा अश्विनी-कुमारों, स्वर्गीय वैद्यों, का प्रादुर्भाव होता है; नेत्रों से रंग, प्रकाश तथा सूर्य का; कानों से दिशाओं तथा पवित्र स्थानों का; श्रवण-शक्ति से आकाश तथा शब्द का ही।

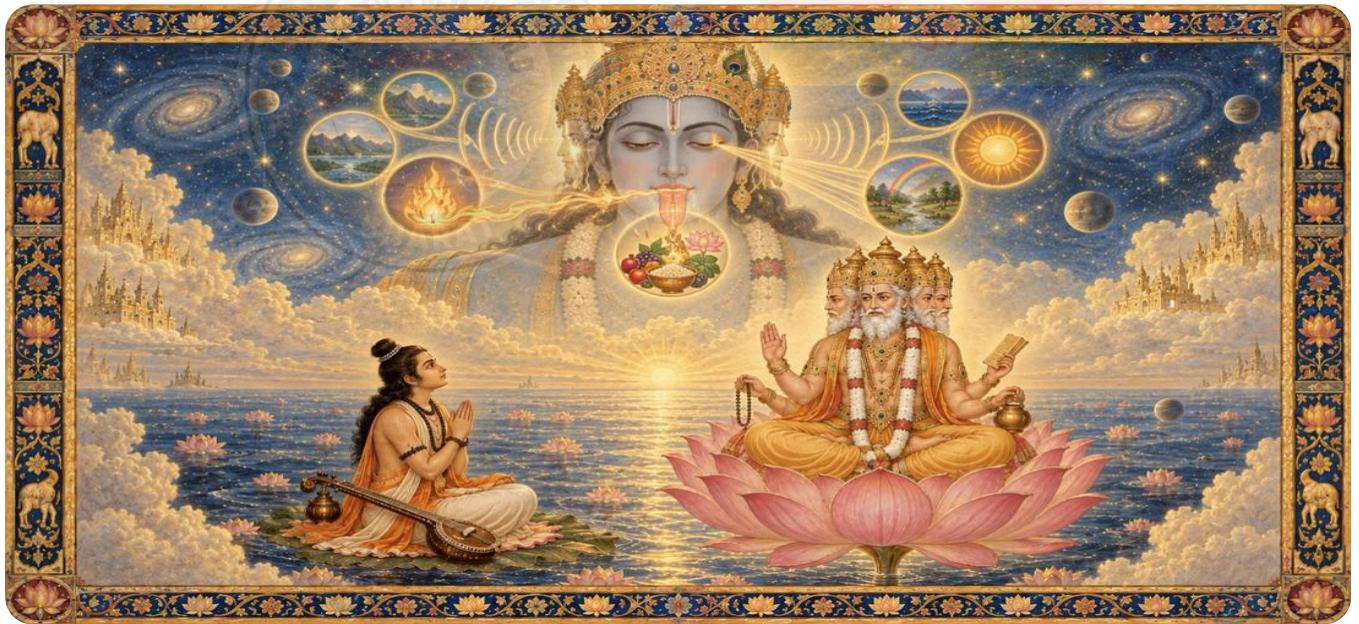
ब्रह्मोवाच

वाचां वह्नेर्मुखं क्षेत्रं छन्दसां सप्त धातवः ।

हव्यकव्यामृतान्नानां जिह्वा सर्वरसस्य च ॥ १ ॥

brahmovāca vācām vahner mukhaṁ kṣetraṁ chandasām sapta dhātavaḥ havya-kavyāmṛtānnānām jihvā sarva-rasasya ca

अर्थ: ब्रह्मा ने आगे कहा: विराट् पुरुष के मुख से वाणी तथा अग्नि-देव प्रकट होते हैं; उनके शरीर के सात अंग सातों वैदिक छन्दों को जन्म देते हैं; और उनकी जिह्वा से प्रत्येक प्रकार का भोजन तथा स्वयं रस-शक्ति उत्पन्न होती है। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 1)



ब्रह्मा नारद को अपना उपदेश जारी रखते हुए दिखाते हैं कि विराट् पुरुष के मुख, जिह्वा, नेत्र तथा कान किस प्रकार किसी वैदिक सिद्धान्त अथवा अधिष्ठाता देवता का जन्मस्थान हैं (श्लोक 1-3)।

ब्रह्मा क्रमबद्ध रूप से आगे बढ़ते हैं: त्वचा से स्पर्श तथा यज्ञ का प्रादुर्भाव होता है; शरीर के रोमों से वृक्ष तथा वनस्पतियाँ प्रकट होती हैं; सिर के केशों से मेघ, दाढ़ी-मूँछों से विद्युत्, तथा नखों से पत्थर एवं लोहा। भुजाएँ दिशाओं के अधिपति देवताओं का जन्मस्थान हैं, जो ब्रह्माण्ड की रक्षा में संलग्न रहते हैं। और फिर एक विशेष मधुर श्लोक आता है — भगवान् की गति तथा चरणों का।

विक्रमो भूर्भुवः स्वश्च क्षेमस्य शरणस्य च ।

सर्वकामवरस्यापि हरेश्चरण आस्पदम् ॥ ६ ॥

vikramo bhūr bhuvaḥ svaś ca kṣemasya śaraṇasya ca sarva-kāma-varasyāpi hareś caraṇa āspadam

अर्थ: विराट् पुरुष की गति तीन लोकों — पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्ग — का आधार है, जबकि श्रीहरि के चरण सुरक्षा, शरण तथा प्रत्येक इच्छित वस्तु के आश्रय हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 6)

विवरण शरीर के आगे के भागों से होता हुआ बढ़ता है: जनन तथा उत्सर्जन की इन्द्रियाँ क्रमशः वर्षा-देव एवं प्रजापति, तथा यम एवं मित्र को जन्म देती हैं; पीठ पराजय तथा तमस् का आधार बनती है; शिराएँ नदियाँ बनती हैं, अस्थियाँ पर्वत बनती हैं, उदर समस्त वस्तुओं का अव्यक्त आधार तथा महासागर बनता है, और हृदय मन का जन्मस्थान बनता है। अन्ततः, ब्रह्मा सबसे सूक्ष्म शक्ति तक पहुँचते हैं — चित्त, अन्तःकरण की चिन्तन-शक्ति।

धर्मस्य मम तुभ्यं च कुमारानां भवस्य च ।

विज्ञानस्य च सत्त्वस्य परस्यात्मा परायणम् ॥ ११ ॥

dharmasya mama tubhyaṁ ca kumārāṇāṁ bhavasya ca vijñānasya ca sattvasya parasyātmā parāyaṇam

अर्थ: परमात्मा धर्म का, मेरा (ब्रह्मा का), तुम्हारा (नारद का), चारों कुमारों का, तथा शिव का उत्कृष्ट आधार हैं, साथ ही विज्ञान (समझ) तथा चिन्तन-शक्ति का भी। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 11)



नदियाँ उनकी शिराओं से बहती हैं, पर्वत उनकी अस्थियों से उठते हैं, मेघ उनके केशों से एकत्रित होते हैं — दृश्य जगत् की प्रत्येक विशेषता विराट् पुरुष के किसी अंग तक जा पहुँचती है (श्लोक 4-11)।

समस्त प्राणी केवल उनका एक अंश हैं

अंगों तथा शक्तियों की इस सूची को पूर्ण करने के पश्चात्, ब्रह्मा अपनी दृष्टि अस्तित्व की प्रत्येक श्रेणी तक विस्तृत करते हैं: देवता, दानव तथा मनुष्य; नाग, पक्षी, हिरण तथा सरीसृप; गन्धर्व तथा स्वर्गीय अप्सराएँ; यक्ष, राक्षस तथा भूत; सर्प तथा पशु; पितर; सिद्ध, विद्याधर तथा चारण; जल, थल तथा आकाश के समस्त वृक्ष तथा जीव; ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु तथा तारे, विद्युत् तथा गर्जते मेघ। यह सब, ब्रह्मा घोषित करते हैं, भूत, वर्तमान तथा भविष्य में, परम पुरुष के अतिरिक्त कुछ नहीं है — और फिर भी यह सब मिलकर उनके अस्तित्व का केवल एक अंश ही व्याप्त करता है। यहीं ब्रह्मा सूर्य को इस बात के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं कि भगवान् एक साथ भीतर तथा बाहर कैसे विद्यमान रह सकते हैं।

स्वधिष्ण्यं प्रतपन् प्राणो बहिश्च प्रतपत्यसौ ।

एवं विराजं प्रतपंस्तपत्यन्तर्बहिः पुमान् ॥ १६ ॥

sva-dhiṣṇyaṁ pratapan prāṇo bahiś ca pratapaty asau evaṁ virājaṁ pratapaṁś tapaty antar bahiḥ pumān

अर्थ: जैसे प्राण-वायु अपने ही आधार को तपाती है और साथ ही बाहर भी तपती है, वैसे ही परम पुरुष, विराट् पुरुष को प्रकाशित करते हुए, ब्रह्माण्ड के भीतर तथा बाहर दोनों ओर तपते हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 16)

भगवान्, ब्रह्मा आगे कहते हैं, मृत्यु तथा कर्म-फल दोनों से परे हैं; वे अकेले ही मोक्ष की उस निर्भय, अमर अवस्था के स्वामी हैं, और इसीलिए उनकी महिमा को माप पाना असम्भव है। समस्त लोक उनका केवल एक अंश हैं, और महर्लोक के ऊपर स्थित तीन उच्चतम स्वर्गों — जनलोक, तपोलोक तथा सत्यलोक — में ही अमरत्व तथा निर्भयता वास्तव में स्थापित हैं। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास — जीवन के तीन आश्रम — भगवान् के तीन चरण बनाते हैं जो तीनों लोकों से बाहर स्थित हैं, जबकि चौथा — गृहस्थ-आश्रम — इन्हीं तीन लोकों के भीतर विद्यमान रहता है। और शास्त्रों में वर्णित दो मार्गों में से — कर्म-मार्ग, जिसे अविद्या कहा गया है (क्योंकि वह पुनर्जन्म की ओर ले जाता है), तथा उपासना-

मार्ग, जिसे विद्या कहा गया है (क्योंकि वह ज्ञान की ओर ले जाता है) — जीवात्मा दोनों में से किसी का भी अनुसरण कर सकता है, किन्तु परम पुरुष ही दोनों का एकमात्र आधार हैं। जैसे सूर्य सबको प्रकाशित तथा गर्म करते हुए भी सबसे पृथक् रहता है, वैसे ही भगवान् — यद्यपि ब्रह्माण्ड-अण्ड, पाँच स्थूल तत्त्वों, दस इन्द्रियों तथा तीन गुणों के स्रोत हैं — पूर्णतः ब्रह्माण्ड तथा अपने ही ब्रह्माण्डीय शरीर से परे रहते हैं।

ब्रह्मा की अपनी साक्षी: नाभि-कमल से जन्म, भगवान् के शरीर से शिक्षा

यहाँ ब्रह्मा व्यक्तिगत हो जाते हैं, नारद को अपनी उत्पत्ति तथा अपने प्रथम पूजा-कर्म का विवरण देते हैं। जब ब्रह्मा उस महात्मा विराट् पुरुष की नाभि में उगे कमल से प्रकट हुए, तो उन्हें ज्ञात हुआ कि परम पुरुष के स्वयं के अंगों के अतिरिक्त यज्ञ के लिए कोई अन्य सामग्री की आवश्यकता नहीं थी।

यदास्य नाभ्यान्नलिनादहमासं महात्मनः ।

नाविदं यज्ञसम्भारान् पुरुषावयवानृते ॥ २२ ॥

*yadāsyā nābhyān nalinād aham āsaṁ mahātmanaḥ nāvidaṁ yajña-sambhārān puruṣāvayavān
rte*

अर्थ: जब मैं इस महात्मा विराट् पुरुष की नाभि में स्थित कमल से प्रकट हुआ, तो मुझे परम पुरुष के स्वयं के अंगों के अतिरिक्त यज्ञ की कोई सामग्री नहीं मिली। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 22)



ब्रह्मा विराट् पुरुष की नाभि से उगे कमल से प्रकट होते हैं, यह पाते हुए कि प्रथम यज्ञ के लिए आवश्यक प्रत्येक सामग्री पहले से ही भगवान् के अपने अंगों में विद्यमान है (श्लोक

22)।

उन्हीं अंगों से, ब्रह्मा बताते हैं, उन्होंने यज्ञ की प्रत्येक आवश्यक वस्तु एकत्रित की — बलि के पशु, यज्ञ-स्तम्भ हेतु वृक्ष, कुश की घास, यह पवित्र भूमि तथा सर्वाधिक अनुकूल ऋतु (वसन्त आदि), पात्र तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ, अन्न (चावल, जौ आदि), घृत तथा अन्य स्निग्ध पदार्थ, सोम आदि पौधों के रस, सोना तथा अन्य धातुएँ, विविध प्रकार की मिट्टी, जल, ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद के पवित्र ग्रन्थ, यज्ञ में अधिष्ठाता चार प्रमुख पुरोहितों (होता, अध्वर्यु, उद्गाता तथा ब्रह्मा) के कर्तव्य, यज्ञों के नाम तथा मन्त्र, दक्षिणा तथा संकल्प, और अन्त में भगवान् को समर्पण की विधियाँ — और इन्हीं सामग्रियों से, जो विराट् पुरुष के अपने शरीर से ही एकत्रित की गई थीं, उन्होंने उसी परम पुरुष, भगवान् विष्णु, की पूजा की। तत्पश्चात्, ब्रह्मा के नौ पुत्रों, मरीचि आदि महान् प्रजापतियों ने, पूर्ण एकाग्रता के साथ, भगवान् के प्रकट (विराट् पुरुष के रूप में) तथा अप्रकट (अन्तर्यामी के रूप में) दोनों स्वरूपों की आराधना की; और समय आने पर मनु, ऋषि, पितर, देवता, दानव तथा मनुष्य — सबने यज्ञों के माध्यम से भगवान् की पूजा की। सृष्टि स्वयं, दूसरे शब्दों में, भगवान् की ही सामग्री से किए गए तथा उन्हीं को वापस अर्पित किए गए भक्ति के एक कार्य के रूप में आरम्भ हुई।

स्वीकारोक्ति: स्वयं ब्रह्मा भी उन्हें नहीं जान सकते

अपनी उत्पत्ति का वर्णन करने के पश्चात्, ब्रह्मा उसी विषय की ओर लौटते हैं जिसने पूर्व अध्याय को आरम्भ किया था — नारायण पर उनकी पूर्ण निर्भरता — किन्तु अब और अधिक आत्मीयता तथा विनम्रता के साथ।

नारायणे भगवति तदिदं विश्वमाहितम् ।

गृहीतमायोरुगुणः सर्गादावगुणः स्वतः ॥ ३० ॥

nārāyaṇe bhagavati tad idaṁ viśvam āhitam gr̥hīta-māyora-guṇaḥ sargādāv agunaḥ svataḥ

अर्थ: यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भगवान् नारायण पर आधारित है, जो मूलतः गुणरहित होते हुए भी सृष्टि के प्रभात में अपनी माया द्वारा महान् गुण धारण करते हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 30)

ब्रह्मा उसी भगवान् की आज्ञा से सृष्टि करते हैं; शिव, उन्हीं के नियन्त्रण में, संहार करते हैं; और स्वयं भगवान्, पुरुष के रूप में, पालन करते हैं — सत्त्व, रजस् तथा तमस् — ये तीन गुण उन्हीं की शक्तियाँ हैं, जो इन तीन कार्यों हेतु धारण की जाती हैं। सम्पूर्ण सृष्टि में, ब्रह्मा दृढ़तापूर्वक कहते हैं, ऐसा कुछ भी नहीं है, चाहे कारण हो अथवा कार्य, जो उनसे भिन्न हो। और फिर, अध्याय के सबसे मार्मिक अंशों में से एक में, ब्रह्मा अपनी ही सीमाओं की ओर मुड़ते हैं। उनके वचन कभी असत्य नहीं पाए गए, वे कहते हैं, और उनकी इन्द्रियाँ कभी पथभ्रष्ट नहीं हुई — केवल इसलिए कि उन्होंने सदैव श्रीहरि का चिन्तन उत्कण्ठित हृदय से किया है। फिर भी, वेद-स्वरूप होते हुए, आजीवन कठोर तपस्या करते हुए, प्रजापतियों के अधिपति होते हुए तथा योग में पूर्णतः निपुण होते हुए भी — वे स्वीकार करते हैं कि वे उस सत्ता को साक्षात् नहीं कर सके जिसके कारण उनका अपना अस्तित्व है। वे उन धन्य चरणों में नमन करते हैं जो जन्म-मृत्यु के चक्र को समाप्त करते हैं, यह स्वीकार करते हुए कि जैसे आकाश स्वयं अपनी सीमाएँ नहीं जानता, वैसे ही भगवान् भी अपनी माया की सीमा को नहीं माप सकते — तो फिर ब्रह्मा, शिव अथवा कोई भी देवता उन्हें पूर्णतः कैसे जान सकता है? हमारा मन, ब्रह्मा कहते हैं, इतना भ्रमित है कि हम इस ब्रह्माण्ड की, जो उन्हीं की माया की रचना है, यथार्थता को भी पूर्णतः नहीं समझ पाते; हम केवल अपनी-अपनी समझ के अनुसार उसके विषय में अनुमान लगा सकते हैं।



वेदों में निपुणता तथा आजीवन तपस्या के बावजूद, ब्रह्मा स्वीकार करते हैं कि वे भी भगवान् को पूर्णतः नहीं जान सकते, और इसके बजाय उन धन्य चरणों में नमन करते हैं जो जन्म-मृत्यु के चक्र को समाप्त करते हैं (श्लोक 30-36)।

नमन उस भगवान् को जिन्हें पूर्णतः नहीं जाना जा सकता

इस स्वीकारोक्ति से अध्याय के सर्वाधिक उद्धृत श्लोकों में से एक उठता है — एक स्तुति, जो ठीक इसलिए अर्पित की जाती है क्योंकि भगवान् उन्हें समझने के प्रत्येक प्रयास से परे हैं।

यस्यावतारकर्माणि गायन्ति ह्यस्मदादयः ।

न यं विदन्ति तत्त्वेन तस्मै भगवते नमः ॥ ३७ ॥

yasyāvatāra-karmāṇi gāyanti hy asmad-ādayaḥ na yaṁ vidanti tattvena tasmai bhagavate namaḥ

अर्थ: नमन है उस भगवान् को, जिनके अवतार तथा लीलाओं का हम निरन्तर गान करते हैं, यद्यपि हम में से कोई भी उन्हें यथार्थ रूप में नहीं जानता। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 37)

वह अजन्मा आदि-पुरुष, ब्रह्मा आगे कहते हैं, स्वयं के भीतर, स्वयं के द्वारा, युग-दर-युग, स्वयं की सृष्टि, पालन तथा संहार करते हैं। वे शुद्ध, निरपेक्ष चेतना हैं, समस्त प्राणियों की अन्तरात्मा में समान रूप से स्थित, सदा सत्य तथा पूर्ण, आदि तथा अन्त से रहित, गुणरहित, शाश्वत तथा अद्वितीय। गहन चिन्तन में लगे हुए वे ही उन्हें साक्षात् करते हैं जिन्होंने शरीर, इन्द्रियाँ तथा मन को पूर्णतः वश में कर लिया है; किन्तु वे दुष्टों के कुतर्क द्वारा आक्रान्त होते ही हमारी दृष्टि से लुप्त हो जाते हैं। और फिर ब्रह्मा उन्हें परम की प्रथम अभिव्यक्ति — पुरुष, विराट् पुरुष — के रूप में नामित करते हैं, जिनसे काल, स्वभाव, कारण-कार्य के रूप में प्रकृति, मन, पाँच स्थूल तत्त्व, अहंकार, तीन गुण, इन्द्रियाँ, तथा स्वयं ब्रह्माण्डीय शरीर — ये सभी उसी सर्वव्यापी भगवान् की आगे की अभिव्यक्तियों के रूप में प्रकट होते हैं।

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य

कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।

द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि

विराट् स्वराट् स्थासु चरिष्णु भूमनः ॥ ४१ ॥

*ādyo 'vatāraḥ puruṣaḥ parasya kālaḥ svabhāvaḥ sad-asaṁmanaś ca dravyaṁ vikāro guṇa
indriyāṇi virāṭ svarāṭ sthāṣṇu carīṣṇu bhūmaḥ*

अर्थ: परम की प्रथम अभिव्यक्ति पुरुष, विराट् पुरुष, हैं; उनके अतिरिक्त काल, स्वभाव, कारण-कार्य, मन, स्थूल तत्त्व, अहंकार, गुण, इन्द्रियाँ तथा ब्रह्माण्डीय शरीर — ये सभी उसी सर्वव्यापी भगवान् की अभिव्यक्तियाँ हैं। (स्कन्ध 2, अध्याय 6, श्लोक 41)



ब्रह्मा उस भगवान् की स्तुति में एक भजन अर्पित करते हैं जिनके अवतारों का सब गान करते हैं, फिर भी जिनका यथार्थ स्वरूप प्रत्येक साधक की पकड़ से परे रहता है (श्लोक

37)।

उनकी महिमा का एक अंश, तथा आगे आने वाले का वचन

अध्याय के अन्तिम श्लोक पुनः सृष्टि के प्रत्येक शक्तिशाली अथवा वैभवशाली प्राणी की ओर विस्तृत होते हैं — स्वयं ब्रह्मा, शिव, विष्णु, दक्ष जैसे महान् प्रजापति, इन्द्र के नेतृत्व में स्वर्ग के रक्षक, गरुड़ तथा आकाश के रक्षक, शेष के नेतृत्व में पाताल के शासक, गन्धर्व, विद्याधर तथा चारणों के अधिपति, यक्ष, राक्षस, सर्प तथा नागों के नेता, श्रेष्ठ ऋषि तथा पितर, दैत्यों, सिद्धों तथा दानवों के अधिपति, प्रेत, पिशाच तथा भूतों के शासक, तथा जल, थल एवं आकाश का प्रत्येक प्राणी जो अलौकिक शक्ति, महिमा, बल, सहनशीलता, वैभव, सौभाग्य अथवा बौद्धिक तेजस्विता धारण करता है। यह सब, ब्रह्मा नारद से कहते हैं, चाहे साकार हो अथवा निराकार, भगवान् का साक्षात् सत्य तथा स्वरूप प्रतीत हो सकता है — किन्तु वास्तव में यह उनकी दिव्य शक्ति का मात्र एक अंश है। इसके साथ ही, ब्रह्मा आगे आने वाले की ओर मुड़ते हैं: वे अब

क्रमशः भगवान् के प्रमुख लीला-अवतारों का वर्णन करेंगे — वे लीलाएँ जिन्हें सुनने से कान की समस्त अशुद्धियाँ धुल जाती हैं, और जिन्हें ब्रह्मा नारद को अमृत के समान, हृदय की पूर्ण तृप्ति तक, पान करने का आमन्त्रण देते हैं। इस वचन के साथ षष्ठ अध्याय समाप्त होता है, और सप्तम अध्याय सीधे भगवान् के दिव्य अवतारों की सूची में प्रवेश करता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. ब्रह्माण्ड केवल ईश्वर में स्थित नहीं — वह उन्हीं से निर्मित है। विराट् पुरुष का प्रत्येक अंग तथा शक्ति किसी तत्त्व, देवता अथवा ब्रह्माण्डीय सिद्धान्त का साक्षात् जन्मस्थान है; सृष्टि कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे ईश्वर ने बाहर से जोड़ा हो, अपितु वह निरन्तर उन्हीं के स्वरूप से प्रवाहित होती है (श्लोक 1-11)।
2. प्रत्येक प्राणी, चाहे कितना भी विशाल हो, भगवान् का केवल एक अंश है। देवताओं तथा दानवों से लेकर ग्रहों तथा तारों तक, ब्रह्मा इस बात पर बल देते हैं कि सृष्टि की सम्पूर्णता परम पुरुष का केवल “एक अंश” ही व्याप्त करती है (श्लोक 12-15)।
3. ईश्वर एक साथ अन्तर्यामी तथा परात्पर हैं। जैसे सूर्य अपने ही मण्डल के भीतर तथा उससे परे प्रकाशित होता है, वैसे ही भगवान् ब्रह्माण्ड को भीतर से प्रकाशित करते हुए भी उससे पूर्णतः परे रहते हैं (श्लोक 16-21)।
4. भक्ति सृष्टि के प्रथम क्षण से ही उसमें बुनी हुई है। ब्रह्मा का अपना प्रथम कार्य, कमल से प्रकट होते ही, भगवान् के अंगों से यज्ञ-सामग्री एकत्रित कर उन्हीं की भेंट से उनकी पूजा करना था (श्लोक 22-29)।
5. सृष्टि में सबसे महान् प्राणी भी ईश्वर को पूर्णतः नहीं जान सकता। ब्रह्मा — वेद-स्वरूप, योग में निपुण, प्रजापतियों के अधिपति — खुलेआम स्वीकार करते हैं कि वे भगवान् के यथार्थ स्वरूप को नहीं जान सकते, और इसके बजाय समर्पण में नमन करते हैं (श्लोक 30-41)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

एक ऐसे अध्याय में कुछ शान्त क्रान्तिकारी है जिसमें ब्रह्माण्ड का सर्वाधिक श्रेष्ठ सृजित प्राणी पैतालीस श्लोक अपनी ही सीमाओं का वर्णन करने में लगाता है। ब्रह्मा सहजता से इस उपदेश का उपयोग अपनी ही महिमा के विस्तार के लिए कर सकते थे — उन्होंने अभी-अभी दिखाया है कि सम्पूर्ण लोक तथा देवता उन्हीं की भुजाओं से, उस विराट् पुरुष के रूप में जिसमें वे निवास करते हैं, प्रकट होते हैं। इसके बजाय, वे सम्पूर्ण वर्णन को एक भेंट में बदल देते हैं: *यह मेरा शरीर नहीं, यह भगवान् का है; ये मेरी शक्तियाँ नहीं, ये उन्हीं की शक्तियों के अंश हैं।* शायद “विराट् पुरुष की महिमा” की सबसे गहरी शिक्षा यही है कि सच्ची महिमा अपने ही उधार लिए हुए स्वभाव को पहचानती है। हम भी, उन उपहारों से बने हैं जिन्हें हमने नहीं रचा — फेफड़ों में साँस, अंगों में शक्ति, मन में उठने वाले विचार — प्रत्येक, यह अध्याय संकेत करता है, उसी एकमात्र स्रोत तक पहुँचता है। इस अध्याय को भक्तिपूर्वक पढ़ना किसी ब्रह्माण्डीय शरीर-रचना के पाठ को याद करना नहीं, अपितु ब्रह्मा की विनम्रता को अपनी बनाना है: यह देखना कि हम जिसे “अपना” कहते हैं, वह कितना कुछ, ध्यान से देखने पर, उसी से उधार लिया हुआ है जो सबको स्वरूप देता है, स्वयं उधार देने वाले को भी।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज, अपने ही शरीर के किसी एक अंग अथवा अपनी किसी इन्द्रिय — हाथ, नेत्र, श्वास, वाणी — को स्मरण में लाइए और क्षणभर के लिए ठहरकर उसे अपनी सम्पत्ति के रूप में नहीं, अपितु प्राप्त किए गए एक उपहार के रूप में देखिए। ब्रह्मा की उस स्वीकारोक्ति का स्मरण कीजिए कि उनका पूर्णतः अनुशासित मन तथा उनकी अचूक वाणी भी केवल इसलिए सम्भव हुई क्योंकि उन्होंने श्रीहरि को अपने हृदय में धारण किए रखा। उनके उदाहरण का अनुसरण करते हुए, उस एक शक्ति के लिए मौन कृतज्ञता का भाव अर्पित कीजिए, और उस मन्त्र में कोमलता से प्रवेश कीजिए जिसने इस सम्पूर्ण श्रृंखला को उसके प्रथम पृष्ठ से यहाँ तक पहुँचाया है: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” आज का यह छोटा-सा अवलोकन, अपने ही शान्त रूप में, उस स्रोत को वापस अर्पित एक भेंट बन जाए जिससे स्वयं ब्रह्मा की महिमा भी प्रवाहित होती है।

उपसंहार

द्वितीय स्कन्ध का षष्ठ अध्याय उसे पूर्ण करता है जो पञ्चम अध्याय ने आरम्भ किया था। जहाँ पञ्चम अध्याय ने भगवान् से ब्रह्माण्ड के क्रम-विकास का अनुसरण किया — गुण, महत्, तत्त्व, ब्रह्माण्ड-अण्ड — वहीं षष्ठ अध्याय पहले से प्रकट विराट् पुरुष की शरीर-रचना की ओर मुड़ता है, यह दिखाते हुए कि उस विराट् काया के भीतर मौजूद हर अंग, हर इन्द्रिय और हर सामर्थ्य अपने आप में इस जगत् की किसी न किसी विशेषता का उद्गम-स्थल है। और जहाँ पञ्चम अध्याय एक वर्णन में समाप्त हुआ था, वहीं षष्ठ अध्याय एक स्वीकारोक्ति में समाप्त होता है: स्वयं ब्रह्मा, ब्रह्माण्ड के साक्षात् सृष्टिकर्ता, यह स्वीकार करते हैं कि उनकी तपस्या, उनकी वैदिक निपुणता, तथा उनकी सिद्ध योग-साधना उन्हें भगवान् के पूर्ण ज्ञान तक नहीं पहुँचा सकीं — केवल समर्पण ही पहुँचा सकता था। ऐसी स्वीकारोक्ति के पश्चात् जो शेष रहता है वह निराशा नहीं, अपितु स्तुति है — वह उसी भगवान् को नमन है जिनके अवतार तथा लीलाओं को संसार सदैव गाता रहता है, फिर भी कोई गायक उनके यथार्थ स्वरूप तक नहीं पहुँच पाता। यह स्तुति अर्पित करने के पश्चात्, ब्रह्मा उन कथाओं की ओर मुड़ते हैं जो अगले अध्याय को भर देंगी — भगवान् के इस जगत् में सम्पन्न लीला-अवतार — नारद को, तथा उनके पश्चात् प्रत्येक पाठक को, उन कथाओं को अमृत के समान पान करने का आमन्त्रण देते हुए।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), द्वितीय स्कन्ध, षष्ठ अध्याय, पृष्ठ 103–110।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र जी के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी भी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका की प्रतिकृति नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता अथवा समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-2-adhyay-6-virat-purusha-ki-mahima.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

